पंचम अध्याय

उपसंहार

सहायक ग्रन्थ सूची

पंचम अध्याय

उपसंहार

जैनेंद्रकुमार जी हिन्दी के लब्ध प्रतिष्ठित उपन्यासकार - कहानीकार हैं। जिन्होंने प्रेमचंद युग में प्रेमचंद संस्थान के कथाकारों से अलग हटकर हिन्दी कथा साहित्य की परम्परा से हटकर लिखने की प्रवृत्ति प्रदान की। उन्हें मनोविश्लेषक, दार्शनिक तथा विद्रोही साहित्यकार के नाम से विभूषित किया गया हैं। उन्होंने कभी इन नारों और नामों का बुरा नही माना। इसके विपरीत अपनी बौद्धिकता से आक्रान्त साहित्य सृजन की धारा से अनवरत जुडे रहे हैं। उन्होंने प्रेमचन्द परवर्ती उपन्यासकारों में अपनी लेखनी की प्रामाणिक परिष्कारिता का मनोविश्लेषण का विशिष्ठ धरातल देकर हिन्दी उपन्यास की विकास धारा में अनन्य योग दिया हैं।

वे अपने उपन्यासों में मनोविश्लेषण के स्तर पर पात्रों की अत्यल्प संख्या पर ही विश्वास करते हैं तथा उनके ही जीवन के विविध पहलुओं और समस्याओं को वे वैयक्तिक स्तर पर उठाते हैं तथा जीवन के प्रति उनकी गहन दृष्टि का विश्लेषण करते हैं। इस वैयक्तिकता के समावेश के कारण उनके उपन्यास रचना के स्तर पर सामाजिक जटिलताओं का परिहार भी व्यक्तिस्तर पर ही करते हैं क्योंकि उनका विचार हैं कि सामाजिक जीवन व्यक्ति के माध्यम से ही मूर्तरूप ग्रहण करता हैं। उनके उपन्यासों में पात्र बाह्य जगत् का न रहकर अन्तर्मुखी हो उठता हैं और उसकी प्रवृत्ति के मूल मे उपन्यासकार का ध्यान व्यक्ति की अन्तर्वृत्तियों के उजागर करने में ही अधिक रहता हैं।

अध्ययन की सुविधाकी दृष्टिसे शोध-प्रबंध को पाँच अध्यायों में विभाजित किया हैं।

प्रथम अध्याय में जैनेंद्रकुमारजी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डाला हैं। और इसमें उनके जीवन की विभिन्न झाँकियोंको दर्शाते हुए यह बताने का प्रयास किया हैं कि उनके जीवन पर किन-किन लोगोंका प्रभाव पडा हैं। जैनेंद्रकुमारजी पर पिता श्री प्यारेलालजी तथा मामा महात्मा भगवानदीन का बहुत ही असर पडा हैं। जैनेंद्रकुमारजी का विवाह श्रीमती भगवती देवी के साथ हुआ था और भगवतीदेवी का उनके साहित्यिक सृजन में बहुत ही ज्यादा योगदान था। साथही साथ जैनेंद्रकुमार जी के लेखक बनाने में उनके मित्र की पत्नी एवं स्नेहमयी भाभी श्रीसुभद्राकुमारी चौहान का महत्त्वपूर्ण योगदान हैं। और इन्होंने अपने मित्र और अपनी पत्नी के जीवन की वास्तविक घटनाओंको लेकर, प्रथम कहानी लिख डाली। जैनेंद्रजी ने अनेको उपन्यास लिखे। उनका पहला उपन्यास 'परख' से अंतिम उपन्यास 'दर्शक' तक कुल मिलाकर बारह उपन्यास लिखे।

अपने उपन्यास सृजन के स्तर पर जैनेंद्रजी ने व्यक्ति और समाज को नये मानव मूल्यों को स्थापित करने का प्रयास किया हैं और उन पात्रों के माध्यम से व्यक्ति को सामाजिक जीवन से निकालकर उन्होंने अलग 'व्यक्ति' के 'स्व' पर विश्लेषित करने की चेष्टा की हैं। यही कारण हैं कि उनके उपन्यासोंपर पलायन वृत्ति का आरोपण भी किया जाता हैं, परंतु यह आरोपण एकांकी पक्ष से उद्भूत हैं। आरोपकर्ता यह भूल जाते हैं कि वे सामाजिक समस्याओंका विश्लेषण भी वैयक्तिक स्तर पर ही करते हैं। यह पलायनवादी वृत्ति का नहीं अपितु जैनेंद्रजी की विशिष्ट औपन्यासिक शिल्प से प्रादुर्भूत अभिव्यक्ति का परिणाम हैं।

इसके अतिरिक्त उनके जीवन परिचय और साहित्य रचना को जानने के पश्चात ऐसा महसूस हुआ कि जैनेंद्रकुमार जैन थे और उनकी साहित्यिक रचनाओं के अनेक स्थलोंपर अनेकथा जैन मत का कोई ना कोई सिध्दात झलक ही जाता हैं। जैसे त्यागपत्र की 'मृणाल' प्रमोद के सम्मुख अपनी स्थिति की निर्णयात्मक जाँच स्व ओर से लाभ हानि विचार कर ही कर पाती हैं। ठीक यही स्थिति व्यतीत की

" अनिता" की है । कहने का मतलब यह है कि मिणय प्रायः जैन मत की उपर्युक्त सिध्दान्तपर ही आधारित है । आत्मपीड़न का सिध्दान्त भी जैन धर्म दर्शन का अंग है । कल्याणी ,मृणाल,बर्सारा,नीला,भुवन मोहिनी,जयन्त आदि पात्र-पात्राओं के आत्मपीडन के ही द्वारा करुणा का विस्फोट संभव हो पाता है । इसलिए उनके पात्र कहे रहते हैं कि सच-मुच जो शास्त्र से नहीं मिलता वे तान आत्मव्यथा में मिल जाता है । इन सभी बातों को प्रथम अध्याय में बताने का प्रयास किया है ।

व्दितीय अध्याय में नारी कि स्थिति और उसके स्वरुप को विस्तार से बताने का प्रयास किया है । मेरे शोध-प्रबन्ध का विषय " नारी - समस्या" है । और नारी समस्याओंको जानने से पहले ये जानना जरुरी हो जाता है कि प्राचीन समय से लेकर आजतक नारियों की स्थिति कैसी रही उनकों कौन कौनसे परिवर्तन आते चले गये,पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओंका अध्ययन करने के पश्चात यही पता चला कि वैदिक काल में भारतीय नारी का व्यक्तित्व अत्यंत सशक्त था । इस काल में नारियाँ पुरुषों के समान सभी अधिकारोंको प्राप्त किये हुओ थी, परंतु इसके बाद इनकी स्थिति नीचे ही गिरती चली गयी । ब्राह्मण युग और बौध काल से मध्य युग तक पहुँचते-पहुँचते नारी बिलकुल पंगु हो गयी थी ।

व्दितीय अध्याय में इसकी विस्तार से चर्चा कि गयी है तथा इसका भी उल्लेख किया है कि आज के युग में नारी को सही रुप में देखा जाता है, अब नारी को देवी, ना मानकर मानवी माना जाता है और पुरुष के समान ही उसे बराबरी का स्थान दिया जाने लगा है । व्दितीय अध्याय में नारी के विभिन्न रुपों का उल्लेख किया है । जैसे पत्नी, प्रेयसी, बहिन,बहू,सास आदि परंतु इन सभी रुपों में नारी का मातृत्वरुप सबसे महान है और यही रुप शाश्वत और आदर्श है । माँ को तो स्वर्ग से भी श्रेष्ठ बताया गया है । और नारी को केवल " माँ " ही नहीं प्रेरक शक्ति के रुप में अंकित किया गया है ।

इसी प्रकार पत्नी के संदर्भ में भी संक्षिप्त चर्चा की गयी है और ये बताने का प्रयास किया है कि पत्नी का महत्व बहुत ही अधिक है । पत्नी के बारेमें

तो यहाँ तक कहा गया कि पत्नी ही घर हैं। विवाह होने के पश्चात पति के प्रति अनन्य प्रेम और विश्वास नारी रखती हैं। नारी एक बार जिसे अपना पति मान लेती हैं आजीवन उसके प्रति समर्पित रहती हैं। इसके साथ साथ ये भी देखा गया हैं कि आज के युग में पत्नी के रूप उसके विचारों में बहुत कुछ परिवर्तन ये हैं कि आज कि नारी सीता के समान बार-बार अग्नि परीक्षा नहीं देगी। आज के नारी के अपने स्वतंत्र विचार हैं, स्वतंत्र अस्तित्व हैं आत्मनिर्भय हैं, इस कारण उसके पत्नी रूपमें भी बहुत कुछ असर पड़ा हैं आज वे गांधारी के समान आँखोंपर पट्टी बाँधकर अपने पति का अनुकरन नहीं कर सकेगी। इन सभी बातोंपर संक्षिप्तपर प्रकाश डाला हैं।

नारी के समाज में विभिन्न रूप हैं। परंतु मैंने अपने विषय से छूते हुए कुछ महत्वपूर्ण संबंधों जैसे प्रेयसी, भाभी, बहन, आदि संबंधों की स्थितियों पर संक्षिप्त प्रकाश डाला हैं।

तृतीय अध्याय में जैनेंद्रकुमारजी के प्रमुख नारी प्रधान उपन्यासों में नारी के विभिन्न रूपों को दिखाया हैं। जैनेंद्रजी के उपन्यासों में पत्नी, प्रेमिका का ही अधिक संदर्भ आया हैं। अन्य संबंध तो कहीं-कहीं संकेतात्मक रूप में ही आये हैं। मैंने प्रमुख रूप से जैनेंद्रकुमारजी के पाँच नारी प्रधान उपन्यासों को लिया हैं। जिनमें प्रमुख 'परख', 'त्यागपत्र', 'सुखदा', 'कल्याणी', 'सुनीता' हैं। जैनेंद्रजी के उपन्यासों में त्यागपत्र में प्रमोद की माँ, सुनीता में सुनीता के मातृत्व रूप को दिखाया गया हैं। पर जैनेंद्रजी ने इसपर ज्यादा विशेष नहीं लिखा। उपन्यासों में पत्नी का चित्रण अधिक मिलता हैं। गृहस्थ जीवन दांपत्य जीवन और स्वच्छंद प्रेम जीवन की त्रिकोणात्मक स्थिति के दर्शन होते हैं। इसके अतिरिक्त प्रेयसी का भी चित्रण भी किया हैं। उनके सभी उपन्यासों में प्रेयसी का अस्तित्व अवश्य हैं।

जैनेंद्रकुमारजी ने प्रेयसी को पत्नी से ज्यादा महत्वपूर्ण माना हैं। प्रेयसी के विभिन्न रूपों का विश्लेषण विस्तार से किया हैं। इसके अतिरिक्त नारी का एक महत्वपूर्ण रूप बहन का भी हैं। जिसकी झलक बहुत कम उपन्यासों में मिलती हैं। समाज में विधवा को एक अभिशाप माना जाता हैं जैनेंद्रजी के कुछ उपन्यास में

विधवा संदर्भ आया हैं। उसपर विस्तार से चर्चा की हैं। उसकी सामाजिक पारिवारिक स्थिति को भी बताया हैं।

चतुर्थ अध्याय में नारियों की विभिन्न समस्याओं को चित्रित किया हैं। वैसे देखा जाय आज भी कुछ जगहों में नारी का जन्म लेना ही एक समस्या माना जाता हैं। फिर जैसे जैसे वे बड़ी होती चली जाती हैं समस्याओं के चक्र में घिरती चली जाती हैं। मैंने जैनेंद्रजी के उपन्यासों में प्रमुख नारी समस्याएँ विवाह, अनमेल विवाह, पत्नी तथा अनैतिकता पुरुष द्वारा नारी का शोषण, नारी मन की दुर्बलता, वेश्यावृत्ति की समस्या, परित्यक्ता नारी, नारी की राजनैतिक समस्या, स्वच्छन्द प्रेम की समस्या, आदि की विस्तार से चर्चा की गयी हैं।

विवाह की समस्या महत्वपूर्ण हैं। भारतीय समाज में नारियों का विवाह भी एक अभिशाप हैं। दहेज के कारण या अन्य किसी कारण से जब वैवाहिक सम्बन्ध ठीक से नहीं जुड पाते तभी अनेक प्रकार की समस्याएँ पैदा हो जाती हैं। जैसे - परित्यक्ता नारी की समस्या, आर्थिक समस्या, विधवा समस्या और वेश्या समस्या इन सभी समस्याओंका उल्लेख जैनेंद्रजी के उपन्यासों की पार्श्वभूमि पर रखकर किया हैं। जैनेंद्रजी बालविधवा की आत्मकथा को समझाते थे। इसी लिए उन्होंने बहुत ही स्वाभाविक ढंग से विधवा का चित्रण कष्टों के रूप में किया। इस पर अच्छी प्रकार से प्रकाश डालने का प्रयास किया हैं।

इसके अतिरिक्त और जो अन्य नारियों से सम्बंधित समस्याये हैं उनका भी गंभीर विवेचन किया हैं तथा ये बताने का प्रयास किया हैं कि ये समस्याएँ आज के युग मे भी विद्यमान हैं।

सार रूप में यही कहा जा सकता हैं कि जैनेंद्रजी के उपन्यासों में जैन धर्म सामाजिक जीवन मूल्यों की अपेक्षा स्वतंत्रता, स्वच्छंदता, सतीत्व, पतित्व एवं प्रियतमत्व का विश्लेषण नवीन यौन मूल्यों के रूप में प्रतिपादित किया हैं। उनके नारी पात्रों की स्वच्छन्दता और स्वतंत्रता परिस्थिती विशेष में पुरुष पात्रों के समान नया चारित्रिक की अप्रतिहित स्थिति की उत्पन्न करती हैं। इसके अतिरिक्त ये भी

देखा हैं कि उनके सभी पात्र शिक्षित मध्यवर्गनिधिका प्रतिनिधित्व करते हैं। वे शिक्षा के प्रभाव से स्वचेतनशील और नैतिकताकी जिज्ञासा से समाज के समस्त विधिनिशेधोंके आगे प्रश्नचिन्ह लगाकर उनकी अवमानना तो कर बैठते हैं लेकिन अवचेतन पर पड़े गहरे संस्कारों के कारण मानसिक संघर्ष की चक्की में पिसते रहते हैं।

••